0751CH39

39 युधिष्ठिर की वेदना

कुछ देर बाद युधिष्ठिर रोती-बिलखती हुई स्त्रियों के समूह को पार करते हुए भाइयों व श्रीकृष्ण सहित धृतराष्ट्र के पास आए व नम्रतापूर्वक हाथ जोड़े खड़े रहे। इसके बाद धृतराष्ट्र ने भीम को अपने पास बुलाया। धृतराष्ट्र के हाव-भाव से श्रीकृष्ण ने अंदाज़ा लगाया कि इस समय धृतराष्ट्र पुत्र-शोक के कारण क्रोध में हैं। इससे भीम को उनके पास भेजना ठीक न होगा। अतः उन्होंने भीमसेन को तो एक तरफ हटा लिया और उसके स्थान पर लोहे की एक प्रतिमा दृष्टिहीन राजा धृतराष्ट्र के आगे लाकर खड़ी कर दी। श्रीकृष्ण का भय सही साबित हुआ। वृद्ध राजा ने प्रतिमा को भीम समझकर ज्योंही छाती से लगाया, त्योंही उन्हें याद हो आया कि मेरे कितने ही प्यारे बेटों को इस भीम ने मार डाला है। इस विचार के मन में आते ही धृतराष्ट्र क्षुब्ध हो उठे और उसे ज़ोरों से छाती से लगाकर कस लिया। प्रतिमा चूर-चूर हो गई। पर प्रतिमा के चूर हो जाने के बाद धृतराष्ट्र को खयाल आया कि मैंने यह क्या कर डाला! वह दुखी हो गए और शोक विह्वल होकर बोले—"हाय! क्रोध में आकर मूर्खतावश मैंने यह क्या कर डाला! भीम की हत्या कर दी।" यह कहकर वह बुरी तरह विलाप करने लगे।

इस पर श्रीकृष्ण ने धृतराष्ट्र से कहा—"राजन्, क्षमा करें। मुझे पहले ही से मालूम था कि क्रोध में आकर आप ऐसा काम करेंगे। इसलिए उस अनर्थ को टालने के लिए मैंने पहले से ही उचित प्रबंध कर रखा था। आपने जिसको नष्ट किया है, वह भीमसेन का शरीर नहीं, बल्कि लोहे की मूर्ति थी। आपके क्रोध का ताप उस पर ही उतरकर शांत हो गया। भीमसेन अभी जीवित है।"

यह सुनकर धृतराष्ट्र के मन को धीरज बँधा और उन्होंने अपना क्रोध शांत कर लिया। उन्होंने सभी पांडवों को आशीर्वाद देकर विदा किया। धृतराष्ट्र से आज्ञा पाकर पाँचों भाई श्रीकृष्ण के साथ गांधारी के पास गए। गांधारी का शोकोद्वेग देखकर अर्जुन भी डर गया और श्रीकृष्ण के पीछे ही खड़ा रहा। कुछ बोला नहीं। गांधारी ने अपने दग्ध-हृदय को धीरे-धीरे शांत कर लिया और पांडवों को आशीर्वाद देकर विदा किया। युधिष्ठिर आदि सब वहाँ से चले गए, परंतु द्रौपदी वहीं गांधारी के पास ही रही। अपने पाँचों सुकुमार बालकों के मारे जाने के कारण द्रौपदी शोकविह्वल होकर रो रही थी। उसकी अवस्था

www.dreamtopper.in

पर गांधारी को बड़ी दया आई। वह बोली—"बेटी, दुखी न होओ। मैं और तुम एक ही जैसी हैं। हमें सांत्वना देनेवाला कौन है? इस सबकी दोषी तो मैं ही हूँ। मेरे ही दोष के कारण आज इस कुल का सर्वनाश हुआ है। पर अब अपने को भी दोष देने से क्या लाभ?"

युधिष्ठिर के मन में यह बात समा गई थी कि हमने अपने बंधु-बांधवों को मारकर राज्य पाया है, इससे उनको भारी व्यथा रहने लगी। अंत में उन्होंने वन में जाने का निश्चय किया, ताकि इस पाप का प्रायश्चित हो सके। यह सुनकर सब भाइयों पर मानो वज्र गिर गया। वे बहुत चिंतित हो उठे और बारी-बारी से सब युधिष्ठिर को समझाने लगे। अर्जुन ने गृहस्थ धर्म की श्रेष्ठता पर प्रकाश डाला। भीमसेन ने कटु वचनों से काम लिया। नकुल ने प्रमाणपूर्वक यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि कर्म-मार्ग न केवल सुगम है, बल्कि उचित भी है, जबकि संन्यास-मार्ग कँटीला और दुष्कर है। इस तरह देर तक युधिष्ठिर से वाद-विवाद होता रहा। सहदेव ने नकुल के पक्ष का समर्थन किया और अंत में अनुरोध किया कि हमारे पिता, माता, आचार्य, बंधु सब कुछ आप ही हैं। हमारी ढिठाई को क्षमा करें। द्रौपदी भी इस वाद-विवाद में पीछे न रही। वह बोली—"अब तो आपका यही कर्तव्य है कि राजोचित धर्म का पालन करते हुए राज्य-शासन करें और चिंता न करें।"

तब शासन-सूत्र ग्रहण करने से पहले युधिष्ठिर भीष्म के पास गए, जो कुरुक्षेत्र में शर-शय्या पर पड़े हुए मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे। पितामह भीष्म ने युधिष्ठिर को धर्म का मर्म समझाया और उपदेश भी दिया। धृतराष्ट्र भी युधिष्ठिर के पास आकर सांत्वना देते हुए बोले—"बेटा, तुम्हें इस तरह शोकविह्वल नहीं होना चाहिए। दुर्योधन ने जो मूर्खताएँ की थीं, उनको सही समझकर मैंने धोखा खाया। इस कारण मेरे सौ-के-सौ पुत्र उसी भाँति काल-कवलित हो गए, जैसे सपने में मिला हुआ धन नींद खुलने पर लुप्त हो जाता है। अब तुम्हीं मेरे पुत्र हो। इस कारण तुम्हें दुखी नहीं होना चाहिए।"

www.dreamtopper.in